51 कुंडीय लक्ष्मी महायज्ञ के उपलक्ष्य में ध्वजारोहण कार्यक्रम में माननीय अध्यक्ष महोदय का सम्बोधन

श्री 51 कुंडीय लक्ष्मी महायज्ञ में पधारे सभी लोगों को नमस्कार।

श्री लक्ष्मी महायज्ञ समस्त संसार के लिए कल्याणकारी है। इस यज्ञ में बैठने मात्र से ही सौ जन्मों का फल मिलता है। सार्वजनिक हित, विश्व शांति और कल्याण के उद्देश्य से प्रतिवर्ष लक्ष्मी महायज्ञ और कथा का आयोजन किया जा रहा है। इस महायज्ञ का पुण्य लाभ आयोजन करवाने वाले को तो मिलता ही है, इसी के साथ यज्ञ में भाग लेने वाले सभी लोगों और क्षेत्रवासियों को भी पुण्य लाभ मिलता है।

जीवन में केवल ज्ञान प्राप्त कर लेना ही काफी नहीं है, बल्कि इसके साथ भक्ति भी जरूरी है। यज्ञ, सत्संग व कथा के माध्यम से मनुष्य भगवान की शरण में पहुंचता है, वरना वह इस संसार में आकर मोहमाया के चक्कर में पड़ जाता है, इसीलिए मनुष्य को समय निकालकर ऐसे आयोजनों में हिस्सा लेना चाहिए।

यज्ञ हमारी समृद्ध संस्कृति का हिस्सा हैं। यह हमारी परंपरा, हमारी पूजा पद्धति का अभिन्न अंग है। यज्ञ सिर्फ एक शब्द के तौर पर ही नहीं, रूप के तौर पर भी व्यापक है। श्रीकृष्ण अर्जुन को मर्म समझाते हुए दान, पुण्य, सेवा, उपकार, रक्षा आदि सत्कर्मों को यज्ञ का ही प्रकार बताते हैं। यज्ञ विष्णु का स्वरूप हैं और विष्णु व्यापक हैं। इसलिए ज्ञान, ध्यान, आराधना और चिंतन यज्ञ हैं, सेवा भी यज्ञ है। प्राचीन समय में हमारे ऋषि – मुनि वन में रहा करते थे और सुबह व शाम में दोनों समय यज्ञ किया करते थे।

यज्ञ करने से वातावरण की शुद्धि होती है, सकारात्मक ऊर्जा और वातावरण का प्रवाह होता है। हमारी संस्कृति में यज्ञ के समय वृक्षों में भगवान का वास मानकर पीपल, बरगद, आम, अशोक, बिल्व, पारिजात, आंवला आदि की पूजा की जाती है। यज्ञ को सफलता और सिद्धि का आधार माना जाता है।

यज्ञ का आधार अग्नि है और अग्नि अनमोल है। हमारी संस्कृति के अनुसार यज्ञ और व्रत आदि से शरीर, आत्मा के साथ प्रकृति संतुलन मजबूत होता है। यज्ञ से ही सूर्य अपनी भूमिका में आता है और यज्ञ से ही जीवनाधार बादल बनकर बरसता है। कहा भी है 'यज्ञाद भवति पर्जन्यो यज्ञकर्म समुदभवः।' यज्ञ में प्राणि-मात्र के सुखी होने की कामना निहित है।

यज्ञ, योग की विधि है, जो परमात्मा द्वारा ही हृदय में सम्पन्न होती है। यज्ञ शुद्ध होने की क्रिया है। यज्ञ का तात्पर्य है- त्याग, बलिदान, शुभ कर्म। अपने प्रिय खाद्य पदार्थों एवं मूल्यवान् सुगंधित पौष्टिक द्रव्यों को अग्नि एवं वायु के माध्यम से समस्त संसार के कल्याण के लिए यज्ञ द्वारा वितरित किया जाता है। यज्ञ हमें दूसरों के कल्याण के लिए त्याग करना सिखाता है।

इस संसार में व्यक्तिगत उन्नति और सामाजिक प्रगति का सारा आधार सहकारिता, त्याग, परोपकार आदि पर निर्भर करता है। यदि माता अपने रक्त-मांस में से एक भाग नये शिशु का निर्माण करने के लिए न त्यागे, प्रसव की वेदना न सहे, अपना शरीर निचोड़कर उसे दूध न पिलाए, पालन-पोषण में कष्ट न उठाए और यह सब कुछ नितान्त निःस्वार्थ भाव से न करें; तो फिर मनुष्य का जीवन-धारण कर सकना भी संभव न हो।

दूध को मथने से उसका जल और घी अलग अलग हो जाते हैं। अब उसी अग्नि में घी डाला जाता है, जिस से अग्नि उसे प्रकाश में परिवर्तित कर देती है। अग्नि और घी का यह प्रतीकात्मक प्रयोग सिर्फ यह ज्ञान देता है कि जब ज्ञान को उसी अग्नि रूपी सत्य में डाल दिया जाता है तब इस कर्म का प्रभाव अलग हो जाता है और अग्नि उस ज्ञान को संसार में प्रकाशित कर अंधकार को दूर करती है। दूध, घी, अग्नि और प्रकाश, क्रमशः अनुभव, ज्ञान, विवेक और सत्य हैं; और यज्ञ उनका एक सामंजस्य है।

यदि यज्ञ भावना यानि त्याग भाव के साथ मनुष्य ने अपने को जोड़ा न होता, तो अपनी शारीरिक असमर्थता और दुर्बलता के कारण अन्य पशुओं की प्रतियोगिता में यह कब का अपना अस्तित्व खो बैठा होता। यह जितना भी अब तक बढ़ा है, उसमें उसकी यज्ञ भावना ही एक मात्र माध्यम है। आगे भी यदि प्रगति करनी हो, तो उसका आधार यही भावना होगी।

प्रकृति का स्वभाव भी यज्ञ परंपरा के अनुरूप है। समुद्र बादलों को उदारतापूर्वक जल देता है, बादल एक स्थान से दूसरे स्थान तक उसे ढोकर ले जाने और बरसाने का की मेहनत करते हैं। नदी, नाले प्रवाहित होकर भूमि को सींचते हैं और प्राणियों की प्यास बुझाते हैं।

वृक्ष एवं वनस्पतियाँ अपने अस्तित्व का लाभ दूसरों को ही देते हैं। पुष्प और फल दूसरे के लिए ही जीते हैं। सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र, वायु.... ये सभी अपने लाभ के लिए नहीं, बल्कि दूसरों के लिए ही है। शरीर का प्रत्येक अवयव अपने निज के लिए नहीं, वरन् समस्त शरीर के लाभ के लिए ही अनवरत गति से कार्यरत रहता है। ऋषियों ने कहा है- यज्ञ ही इस संसार चक्र का धुरा (कमानी) है। धुरा टूट जाने पर गाड़ी का आगे बढ़ सकना कठिन है।

प्राचीनकाल में तीर्थ वहीं बने हैं, जहाँ बड़े-बड़े यज्ञ हुए थे। जिन घरों में, जिन स्थानों में यज्ञ होते हैं, वह भी एक प्रकार का तीर्थ बन जाता है और उन घरों में जो लोग रहते हैं, उनकी मनोस्थिति उच्च, सुविकसित और सुसंस्कृत रहती है।

यज्ञ को पापनाशक भी कहा गया है। यज्ञ के प्रभाव से सुसंस्कृत हुई विवेकपूर्ण मनोभूमि का प्रतिफल जीवन के प्रत्येक क्षण को स्वर्ग जैसे आनन्द से भर देता है, इसलिए यज्ञ को स्वर्ग देने वाला कहा गया है।

यज्ञ से आत्मा में ऋषि तत्त्व की वृद्धि होती है और आत्मा को परमात्मा से मिलाने का परम लक्ष्य बहुत सरल हो जाता है। आत्मा और परमात्मा को जोड़ देने का, बाँध देने का कार्य यज्ञ की अग्नि द्वारा ऐसे ही होता है, जैसे लोहे के टूटे हुए टुकड़ों को बैल्डिंग की अग्नि जोड़ देती है। यज्ञ के द्वारा काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सर, ईर्ष्या, द्वेष, कायरता, कामुकता, आलस्य, आवेश, संशय आदि का नाश होता है।

अनेक प्रयोजनों के लिए, अनेक कामनाओं की पूर्ति के लिए, अनेक विधानों के साथ, अनेक विशिष्ट यज्ञ भी किये जा सकते हैं। दशरथ ने यज्ञ करके चार उत्कृष्ट सन्तानें प्राप्त की थीं, अग्निपुराण में तथा उपनिषदों में वर्णित पंचाग्नि विद्या में ये रहस्य बहुत विस्तारपूर्वक बताये गये हैं। विश्वामित्र आदि ऋषि प्राचीनकाल में असुरता निवारण के लिए बड़े-बड़े यज्ञ करते थे। राम-लक्ष्मण को ऐसे ही एक यज्ञ की रक्षा के लिए स्वयं जाना पड़ा था। लंका युद्ध के बाद राम ने दस अश्वमेध यज्ञ किये थे। महाभारत के पश्चात् कृष्ण ने भी पाण्डवों से एक महायज्ञ कराया था, उनका उद्देश्य युद्ध के कारण हुए दुःख और बुराई को समाप्त करना था।

हमारे जीवन की प्रधान नीति 'यज्ञ' भाव से परिपूर्ण होनी चाहिए। हम यज्ञ आयोजनों में लगें-परमार्थ परायण बनें और जीवन को यज्ञ परंपरा में ढालें। हमारा जीवन यज्ञ के समान पवित्र, प्रखर और प्रकाशवान् हो। गंगा स्नान से जिस प्रकार पवित्रता, शान्ति, शीतलता, आदरता को हृदयंगम करने की प्रेरणा ली जाती है, उसी प्रकार यज्ञ से तेजस्विता, प्रखरता, परमार्थ-परायणता एवं उत्कृष्टता का प्रशिक्षण मिलता है। यज्ञ वह पवित्र प्रक्रिया है जिसके द्वारा अपावन एवं पावन के बीच सम्पर्क स्थापित किया जाता है।

यज्ञ की प्रक्रिया को जीवन यज्ञ का एक रिहर्सल कहा जा सकता है। अपने घी, शक्कर, मेवा, औषधियाँ आदि बहुमूल्य वस्तुएँ जिस प्ररकार हम परमार्थ प्रयोजनों में होम करते हैं, उसी तरह अपनी प्रतिभा, विद्या, बुद्धि, समृद्धि, सार्मथ्य आदि को भी विश्व मानव के

चरणों में समर्पित करना चाहिए। इस नीति को अपनाने वाले व्यक्ति न केवल समाज का, बल्कि अपना भी सच्चा कल्याण करते हैं।

संसार में जितने भी महापुरुष, देवमानव हुए हैं, उन सभी को यही नीति अपनानी पड़ी है। जो उदारता, त्याग, सेवा और परोपकार के लिए कदम नहीं बढ़ा सकता, उसे जीवन की सार्थकता का श्रेय और आनन्द भी नहीं मिल सकता।

यज्ञ सामूहिकता का प्रतीक है। अन्य उपासनाएँ या धर्म-प्रक्रियाएँ ऐसी हैं, जिन्हें कोई अकेला कर या करा सकता है; पर यज्ञ ऐसा कार्य है, जिसमें अधिक लोगों के सहयोग की आवश्यकता है। होली आदि पर्वों पर किये जाने वाले यज्ञ तो सदा सामूहिक ही होते हैं। यज्ञ आयोजनों से सामूहिकता, सहकारिता और एकता की भावनाएँ विकसित होती हैं।

प्रत्येक शुभ कार्य, प्रत्येक पर्व-त्यौहार, संस्कार यज्ञ के साथ सम्पन्न होता है। यज्ञ भारतीय संस्कृति का पिता है। यज्ञ भारत की एक मान्य एवं प्राचीनतम वैदिक उपासना है। धार्मिक एकता एवं भावनात्मक एकता को लाने के लिए ऐसे आयोजनों की सर्वमान्य साधना का आश्रय लेना सब प्रकार दूरदर्शितापूर्ण है।

लोकमंगल के लिए, जन-जागरण के लिए, वातावरण के परिशोधन के लिए स्वतंत्र रूप से भी यज्ञ आयोजन सम्पन्न किये जाते हैं। संस्कारों और पर्व-आयोजनों में भी उसी की प्रधानता है।

हमारी प्राचीन संस्कृति को अगर एक ही शब्द में समेटना हो तो वह है यज्ञ। 'यज्ञ' शब्द संस्कृत की यज् धातु से बना हुआ है जिसका अर्थ होता है दान, देवपूजन एवं संगतिकरण। भारतीय संस्कृति में यज्ञ का व्यापक अर्थ है, यज्ञ मात्र अग्निहोत्र को ही नहीं कहते हैं वरन् परमार्थ परायण कार्य भी यज्ञ है। यज्ञ स्वयं के लिए नहीं किया जाता है बल्कि सम्पूर्ण विश्व के कल्याण के लिए किया जाता है।

यज्ञ का प्रचलन वैदिक युग से है, वेदों में यज्ञ की विस्तार से चर्चा की गयी है, बिना यज्ञ के वेदों का उपयोग कहां होगा और वेदों के बिना यज्ञ कार्य भी कैसे पूर्ण हो सकता है। अस्तु यज्ञ और वेदों का अन्योन्याश्रय संबंध है।

जिस प्रकार मिट्टी में मिला अन्न कण सौ गुना हो जाता है, उसी प्रकार अग्नि से मिला पदार्थ लाख गुना हो जाता है। अग्नि के सम्पर्क में कोई भी द्रव्य आने पर वह सूक्ष्मीभूत होकर पूरे वातावरण में फैल जाता है और अपने गुण से लोगों को प्रभावित करता है। इसको इस तरह समझ सकते हैं कि जैसे लाल मिर्च को अग्नि में डालने पर वह अपने गुण से लोगों

को प्रताड़ित करती है इसी तरह सामग्री में उपस्थित स्वास्थ्यवद्र्धक औषधियां जब यज्ञाग्नि के सम्पर्क में आती है तब वह अपना औषधीय प्रभाव व्यक्ति के स्थूल व सूक्ष्म शरीर पर दिखाती है और व्यक्ति स्वास्थ्य लाभ प्राप्त करता चला जाता है।

यज्ञ की महिमा अनन्त है। यज्ञ से आयु, आरोग्यता, तेजस्विता, विद्या, यश, पराक्रम, वंशवृद्धि, धन-धन्यादि, सभी प्रकार की राज-भोग, ऐश्वर्य, लौकिक एवं पारलौकिक वस्तुओं की प्राप्ति होती है। प्राचीन काल से लेकर अब तक रुद्रयज्ञ, सूर्ययज्ञ, गणेशयज्ञ, लक्ष्मीयज्ञ, श्रीयज्ञ, लक्षचंडी भागवत यज्ञ, विष्णुयज्ञ, ग्रह-शांति यज्ञ, पुत्रेष्टि, शत्रुंजय, राजसूय, ज्योतिष्टोम, अश्वमेध, वर्षायज्ञ, सोमयज्ञ, गायत्री यज्ञ इत्यादि अनेक प्रकार के यज्ञ होते चले आ रहे हैं। हमारा शास्त्र, इतिहास, यज्ञ के अनेक चमत्कारों से भरा पड़ा है। जन्म से लेकर मृत्यु तक के सभी सोलह-संस्कार यज्ञ से ही प्रारंभ होते हैं एवं यज्ञ में ही समाप्त हो जाते हैं।

यज्ञ करने से व्यष्टि नहीं अपितु समष्टि का कल्याण होता है। (इसका अर्थ है कि यज्ञ करने से किसी एक व्यक्ति का नहीं, बल्कि समस्त मानवों का कल्याण होता है)।

यज्ञ को वेदों में 'कामधूक' कहा गया है अर्थात् मनुष्य के समस्त अभावों एवं बाधाओं को दूर करने वाला। 'यजुर्वेद' में कहा गया है कि जो यज्ञ को त्यागता है उसे परमात्मा त्याग देता है। यज्ञ के द्वारा ही साधारण मनुष्य देव-योनि प्राप्त करते हैं और स्वर्ग के अधिकारी बनते हैं। यज्ञ को सर्व कामना पूर्ण करने वाली कामधेनु और स्वर्ग की सीढ़ी कहा गया है। इतना ही नहीं यज्ञ के जरिए आत्म-साक्षात्कार और ईश्वर प्राप्ति भी संभव है।

यज्ञ भारतीय संस्कृति का आदि प्रतीक है। शास्त्रों में गायत्री को माता और यज्ञ को पिता माना गया है। कहते हैं इन्हीं दोनों के संयोग से मनुष्य का दूसरा यानी आध्यात्मिक जन्म होता है जिसे द्विजत्व कहा गया है। एक जन्म तो वह है जिसे इंसान शरीर के रूप में माता-पिता के जरिए लेता है। यह तो सभी को मिलता है लेकिन आत्मिक रूपांतरण द्वारा आध्यात्मिक जन्म यानी दूसरा जन्म किसी किसी को ही मिलता है। शारीरिक जन्म तो संसार में आने का बहाना मात्र है लेकिन वास्तविक जन्म तो वही है जब इंसान अपनी अंत: प्रज्ञा से जागता है, जिसका एक माध्यम है 'यज्ञ'।

यज्ञ की पहचान है 'अग्नि' या यूं कहें 'अग्नि', यज्ञ का अहम हिस्सा है जो कि प्रतीक है शक्ति की, ऊर्जा की, सदा ऊपर उठने की। शास्त्रों में अग्नि को ईश्वर भी कहा गया है इसी अग्नि में ताप भी छिपा है तो भाप भी छिपी है। यही अग्नि जलाती भी है तो प्रकाश भी देती है। इसी अग्नि के माध्यम से जल भी बनता है और जल मात्र मानव जीवन के लिए ही नहीं बल्कि पूरी प्रकृति के लिए वरदान है, अमृत है। इसीलिए अग्नि इतनी पूजनीय है।

एक प्रकार से अग्नि ही ईश्वर है तभी तो अग्नि इतनी पूजनीय है। यही कारण है कि हर धर्म एवं सम्प्रदाय में अग्नि का इतना महत्व है तथा उसे किसी न किसी रूप में जलाया व पूजा जाता है। और यज्ञ भी एक तरह की पूजा है। यदि यज्ञ में जलती अग्नि ईश्वर है तो अग्नि का मुख ईश्वर का मुख है। यज्ञ में कुछ भी आहूत करने का अर्थ है परमात्मा को भोजन कराना। इसलिए अग्नि को जो कुछ खिलाया जाता है वह सही अर्थों में ब्रह्मभोज है। जिस तरह भगवान सबको खिलाता है उसी तरह यज्ञ के जरिए इंसान भगवान को खिलाता है।

यज्ञ परमात्मा तक पहुंचने का सोपान है। उसका सान्निध्य पाने का माध्यम है। यज्ञ में प्रकट अग्नि साक्षात् भगवान है। इसीलिए यज्ञ में अग्नि को प्रज्जवलित करने के लिए तथा उसे बनाए रखने के लिए यज्ञ या हवन सामग्री का भी विशेष स्थान है। यह सामग्री न केवल भगवान के भोजन का हिस्सा बनती है बल्कि इससे उठने वाला धुआं वायुमंडल को शुद्ध करता है।

भगवद्गीता के अनुसार यज्ञ' भगवद्गीता के अनुसार परमात्मा के निमित्त किया कोई भी कार्य यज्ञ कहा जाता है। परमात्मा के निमित्त किये कार्य से संस्कार पैदा नहीं होते न कर्म बंधन होता है। भगवदगीता के चौथे अध्याय में भगवान श्री कृष्ण द्वारा अर्जुन को उपदेश देते हुए विस्तार पूर्वक विभिन्न प्रकार के यज्ञों को बताया गया है।

श्री भगवान कहते हैं, अर्पण ही ब्रह्म है, हवि ब्रह्म है, अग्नि ब्रह्म है, आहुति ब्रह्म है, कर्म रूपी समाधि भी ब्रह्म है और जिसे प्राप्त किया जाना है वह भी ब्रह्म ही है। यज्ञ परब्रह्म स्वरूप माना गया है। इस सृष्टि से हमें जो भी प्राप्त है, जिसे अर्पण किया जा रहा है, जिसके द्वारा हो रहा है, वह सब ब्रह्म स्वरूप है अर्थात सृष्टि का कण कण, प्रत्येक क्रिया में जो ब्रह्म भाव रखता है वह ब्रह्म को ही पाता है अर्थात ब्रह्म स्वरूप हो जाता है। कर्म योगी देव यज्ञ का अनुष्ठान करते हैं तथा अन्य ज्ञान योगी ब्रह्म अग्नि में यज्ञ द्वारा यज्ञ का हवन करते हैं।

देव पूजन उसे कहते हैं जिसमें योग द्वारा अधिदैव अर्थात जीवात्मा को जानने का प्रयास किया जाता है। कई योगी ब्रह्म अग्नि में आत्मा को आत्मा में हवन करते हैं अर्थात अधियज्ञ (परमात्मा) का पूजन करते हैं।

यज्ञ से बचे हुए अमृत का अनुभव करने वाले पर ब्रह्म परमात्मा को प्राप्त होते हैं अर्थात यज्ञ क्रिया के परिणाम स्वरूप जो बचता है वह ज्ञान ब्रह्म स्वरूप है। इस ज्ञान रूपी अमृत को पीकर वह योगी तृप्त और आत्म स्थित हो जाते हैं परन्तु जो मनुष्य यज्ञाचरण नहीं करते उनको न इस लोक में कुछ हाथ लगता है न परलोक में। इस प्रकार बहुत प्रकार की यज्ञ विधियां वेद में बताई गयी हैं। यह यज्ञ विधियां कर्म से ही उत्पन्न होती हैं। इस बात को

जानकर कर्म की बाधा से जीव मुक्त हो जाता है। द्रव्यमय यज्ञ की अपेक्षा ज्ञान यज्ञ अत्यन्त श्रेष्ठ है। द्रव्यमय यज्ञ सकाम यज्ञ हैं और अधिक से अधिक स्वर्ग को देने वाले हैं परन्तु ज्ञान यज्ञ द्वारा योगी कर्म बन्धन से छुटकारा पा जाता है और परम गति को प्राप्त होता है।

इस संसार में ज्ञान के समान पवित्र करने वाला वास्तव में कुछ भी नहीं है क्योंकि जल, अग्नि आदि से यदि किसी मनुष्य अथवा वस्तु को पवित्र किया जाय तो वह शुद्धता और पवित्रता थोड़े समय के लिए ही होती है, जबकि ज्ञान से जो मनुष्य पवित्र हो जाय वह पवित्रता सदैव के लिए हो जाती है।

ज्ञान ही अमृत है और इस ज्ञान को लम्बे समय तक योगाभ्यासी पुरुष अपने आप अपनी आत्मा में प्राप्त करता है क्योंकि आत्मा ही अक्षय ज्ञान का श्रोत है। जिसने अपनी इन्द्रियों का वश में कर लिया है तथा निरन्तर उन्हें वशमें रखता है, जो निरन्तर आत्म ज्ञान में तथा उसके उपायों में श्रद्धा रखता है, ऐसा मनुष्य उस अक्षय ज्ञान को प्राप्त होता है तथा ज्ञान को प्राप्त होते ही परम शान्ति को प्राप्त होता है। ज्ञान प्राप्त होने के बाद उसका मन नहीं भटकता, इन्द्रियों के विषय उसे आकर्षित नहीं करते, लोभ मोह से वह दूर हो जाता है तथा निरन्तर ज्ञान की पूर्णता में रमता हुआ आनन्द को प्राप्त होता है।